Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 9, October-2018, ISSN 2230-7540

गाँधी जी की तिरहुत यात्रा का ऐतिहासिक महत्व

Dr. Vardraj*

Department of History, TMB University, Bhagalpur

सारांश – *बताते हैं कि 1918 में महात्मा गांधी ने तिरहुत के कमिश्नर एलएफ मोर्शिद से मिलकर अपने चंपारण यात्रा का कार्यक्रम बनाया था। तब चंपारण में नीलहे किसानों पर अत्याचार का दौर चरम पर था। चंपारण यात्रा पूरी होने के बाद महात्मा गांधी को सारण के हरपुर जान गांव में एक सभा को संबोधित करना था। ऐसे में उनके आगमन की भनक गंधुआ गांव के श्यामसुन्दर जी को लग गई। गांधी जी के साथ सारण जिले के अमनौर थाना के अपहर गांव के वकील गोरखनाथ तथा सारण जिला परिषद के चेयरमैन मौलाना मजहरूल हक भी लारी में सवार होकर हरपुर जान गांव आ रहे थे। इसी बीच श्यामसुन्दर लाल मजहरूल हक से मिले और उनसे बात कर गांधी जी को गंधुआ लाने के लिए तैयार किये। गांव तक आने के लिए सही रास्ता तक नहीं था। ऐसे में गांव के एक किलोमीटर दूर गांधी जी को लारी से उतारकर बैलगाड़ी पर बैठाया गया। इस गांव के बुजुर्ग यादों की कड़ियों को जोड़ते हुए बताते हैं कि गांधी जी ने कहा था कि हिंसा मत कीजिए व सच्ची बात बोलिए। वे बताते हैं उस समय गांव में विद्यालय नहीं था। जब गांधी जी को इसका पता चला तो उन्होंने गांव में एक विद्यालय की स्थापना खुद अपने ही हाथों से की थी। 1919 में मिट्टी की भीत पर विद्यालय बनकर तैयार हुआ। तब पांच-छह कोस से बच्चे यहां पढ़ने आते थे। लेकिन अब गांधी जी द्वारा स्थापित यह विद्यालय किसी भी नजर से साधन संपन्न नहीं दिखता। शिक्षकों की कमी से लेकर तमाम समस्याओं से जूझ रहे महात्मा गांधी के सपनों का गांव गंधुआ आज भी उपेक्षित हैं।*

----------X----------

बीसवीं सदी के दूसरे दशक में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के नए युग की शुरूआत होती है, जिसमें जन-संघर्ष की रणनीति को अपनाते हुए इस लड़ाई को मंजिल तक ले जाती है। इस आन्दोलन की शुरूआत चम्पारण सत्याग्रह से ही होती है। चम्पारण सत्याग्रह गाँधी जी के नेतृत्व में भारत में होने वाला प्रथम आंदोलन था। प्राचीन काल से ही चम्पारण मिथिला की सीमाओं के अन्तर्गत रहा है। यह ब्रिटिष शासन काल में नील की खेती के लिए प्रसिद्ध था। चंपारण आन्दोलन मुख्यतः नील-कृषकों के साथ अंग्रजों द्वारा किये जाने वाले अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध एक सषक्त आन्दोलन था, जिसका प्रभाव व्यापक रूप से पूरे भारतीय जनमानस पर पड़ा। इसीलिए इसे नील-आन्दोलन के रुप में भी जाना जाता है। उपनिवेश विरोधी भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में यह नील-आन्दोलन एक महत्वपूर्ण चरण है। चम्पारण सत्याग्रह आन्दोलन, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास तथा गाँधी की विचार-यात्रा में अनेक विशिष्टताओं के साथ उल्लिखित है। इस आंदोलन के दौरान चम्पारण के असंगठित शोषित किसानों ने गाँधी के करिश्माई नेतृत्व में जहाँ एक ओर ब्रिटिश सरकार द्वारा थोपी गयी भूमि व्यवस्था के औपनिवेशिक रूपान्तर के विरूद्ध मुखर लड़ाई लड़ा, वहीं दूसरी ओर गाँधी को ऐसे समय में अतिशय जनसमर्थन के साथ-साथ वैचारिक दिशा-दृष्टि दी, जब वे अपनी राजनीतिक-सामाजिक सक्रियता को निश्चित आकार एवं आधार देने के लिए यायावर बने सम्पूर्ण भारत में भ्रमणशील थे गाँधी के लिए यह आन्दोलन सत्याग्रह की प्रथम प्रयोगशाला से अधिक भारतीय परिवेश में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अभियंत्रण को समझने का सुअवसर था। गाँधी ने चम्पारण आंदोलन से जुड़े सभी पक्षों की मानवीय दुर्बलताओं का साक्षात्कार किया तथा सामाजिक असंगतियों की समाप्ति हेतु यथार्थ तथा आदर्श के बीच की दूरी को कम करते हुए ‘‘मध्यम मार्ग’’ का सहारा लिया।

परम्परागत इतिहास-लेखन के अन्तर्गत निलहे यूरोपियनों द्वारा लागू की गयी ‘‘तीन-कठिया’’ व्यवस्था के कारण प्रारंभ हुए चम्पारण आन्दोलन की सफलता तीनकठिया व्यवस्था की समाप्ति के रूप में देखा जाता है, किन्तु यह तस्वीर का मात्र एक पक्ष है। तस्वीर का दूसरा पक्ष मानव की बौद्धिक प्रवृत्तियों से जुड़ा है, जो स्पष्ट करता है कि परिस्थितिजन्य मानवीय प्रवृत्तियाँ किस प्रकार जीर्ण-शीर्ण परम्पराओं,

www.ignited.in

वातावरण तथा व्यवस्था के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गाँधी की विचारधारा में यह आंदोलन वह महत्वपूर्ण पड़ाव था, जहाँ मूक द्रष्टाभाव से उन्होंने शोषण के विरूद्ध छद्म शोषण विरोधियों की सक्रियता को विश्लेषित करते हुए मौलिक समस्या के निदान हेतु आदर्शमूलक, व्यवहारिक, सामाजिक, आर्थिक परिवेश की रचना को प्राथमिकता दी तथा सत्याग्रह एवं आत्मानुशासन को नैतिक, आध्यात्मिक अभ्युत्थान का शस्त्र बनाया। बाह्य तौर पर तो चम्पारण आन्दोलन यूरोपीय नीलवरों के शोषण के विरूद्ध उत्पीड़ित समुदाय का संघर्ष था, किन्तु सूक्ष्मतापूर्वक देखने से स्पष्ट होता है कि इसके दोनों ही पक्ष-वादी और फरियादी, मानवीय दुर्बलताओं तथा भौतिकवादी आसक्तियों से पूर्णतः ग्रस्त थे।

20वीं सदी के आरंभिक दशकों में उत्तर बिहार के विभिन्न हिस्सों में अंदर ही अंदर सुलगते आक्रोष और यत्र-तत्र विद्रोह को अभी तक स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि में विश्लेषित किया गया है और इस क्रम में किसानों के स्वतंत्र भूमिका की उपेक्षा की गयी है। हाल के वर्षो में हुए अनेक अनुसंधानों से यह स्पष्ट हुआ है कि प्रत्येक विद्रोह की धारा के नीचे भी एक अन्तर्धारा प्रावाहित होती है। नवीन अवधारणाओं तथा मापदण्डों पर एक बार पुनः चम्पारण सत्याग्रह आन्दोलन की समीक्षा की आवश्यकता है।

गाँधी जी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह का सफल प्रयोग किया था। वहाँ के पश्चात् उन्होंने इस नवीन अस्त्र का साहसपूर्ण एवं सफल प्रयोग भारत-भूमि में सर्वप्रथम चम्पारण में ही किया। सभी प्रकार के मानव कष्टों के निवारणार्थ उनके सिद्धांतानुसार सत्याग्रह सर्वोत्तम औषधि थी। किंतु उसके उचित प्रयोग के लिए आत्मबल की आवश्यकता बताते थे, जिनकी प्राप्ति सत्य, अहिंसा, सेवा, त्याग एवं आत्मशुद्धि पर आधारित है। महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह के सिद्धांतों के आधार पर चम्पारण के किसानों को कष्ट दूर करने का प्रयास किया। उसी का सफल प्रयोग उन्होंने अखिल भारतीय कांग्रेस के माध्यम से विशाल रूप में अंग्रेजी शासन को मुक्त करने हेतु किया। चम्पारण में निहाले कोठी वाले अंग्रेजों के अत्याचारों से वहाँ की प्रजा को मुक्ति सत्याग्रह द्वारा मिली, और भारतवर्ष की जनता विदेशियों की दासता से उसी के द्वारा मुक्त हुई। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने 1949 में कहा था- "चम्पारण में जो कुछ हुआ, मेरी आशा के अनुरूप सारे देश में विराट पैमाने पर उसकी पुनरावृत्ति की गयी। चम्पारण निहले साहब (गोरे भूमिपतियों) के अत्याचार से मुक्त हुआ।

दुनिया के इतिहास की अन्य क्रान्तियों की तरह चम्परण का आन्दोलन एक शोषणकारी आर्थिक व्यवस्था की भयंकर बुराइयों के विरूद्ध असंतोष तथा प्रतिशोध का परिणाम था। चम्पारण में तीनकठिया प्रथा पूँजीवादी व्यवस्था के प्रभाव में वर्षो से कायम थी। इस प्रथा के अन्तर्गत गोरे निलहे साहब बड़े पैमाने पर नील की खेती एवं उत्पादन इस क्षेत्र में कराते आ रहे थे। इसके लिए वे सीधे-सादे एवं विपन्न ग्रामीण लोगों के हितों की कुछ भी परवाह नहीं करते थे। उन्हें केवल अपने लाभ एवं मुनाफे की धुन रहती थी। बिहार में, जहाँ कहीं भी नील की खेती होती थी, अन्याय एवं विकृत शोषण का सबसे भयंकर रूप दिखायी पड़ता था।[2] निलहे साहबों का दीन-हीन रैयतों के साथ व्यवहार लोमहर्षक अत्याचारों की एक लम्बी कहानी है।

चम्पारण ही नहीं, सारे उत्तर बिहार में निलहे कोठी वालों का जाल सा बिछा हुआ था। जगह-जगह पर उनकी कोठियाँ थीं, जिसके आस-पास विस्तृत क्षेत्र में नील उपजाते व उसका व्यापार करते। उसकी अपनी भूमि कम थी। इसलिए वे अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु वे अनेक उपायों का आलम्बन करते थे। इन कोठीवालों ने आपस में मिलकर अपने-अपने कार्यक्षेत्र में हदबन्दी कर ली थी। एक कोठी के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत कई ग्राम पड़ते थे। उन ग्रामों के अधिवासी चाहे? जमींदार हों या रैयत, उस क्षेत्र के कोठीवाल अंग्रेज के 'रीजेन्ट; (प्रजा) कहे जाते थे और उनके ऊपर उस नील-कोठी के स्वामी का प्रभुत्व माना जाता था। यद्यपि उनसे उनका किसी प्रकार का भूमि संबंधी अथवा रूपये के लेन-देन का संबंध नहीं होता था। कोठी वाले बहुधा जमींदार से बकाश्त अथवा रैयती जमीनों का ठेका लिखा लेते थे। इस हेतु उन्हें कुछ अग्रिम राशि भी प्रदान किया जाता था। इस प्रकार के ठेकेदारी के बल पर वे रैयतों के मालिक बन बैठते थे और उनपर हुकूमत करते थे। रैयतों के जमीन का भी ठेका ले लेते थे। इसके अतिरिक्त जमींदारों एवं रैयतों को अपने अधिकार की जमीन से प्रति बीघा तीन कट्ठा निकालकर उसमें नील की खेती करनी पड़ती थी। इस पद्धति को तीन-कठिया का नाम दिया गया। रैयतों और जमींदारों को अच्छी से अच्छी एवं उर्वर खेतों में ही नील की खेती हेतु प्रति बीघा तीन कट्ठा के हिसाब से जमीन सुरक्षित रखना पड़ता था। उसके बदले में कोठीवाले साहब अपनी इच्छा के अनुसार एक छोटी सी रकम प्रति बीघा के हिसाब से उन्हें दे देते थे। खेत की जुताई-कोड़ाई बढ़िया नहीं होने पर निलहे अंग्रेज भत्र्सना एवं डाँट-फटकार करते अथवा जुर्माना कर उनसे रूपए वसूल करते थे। कभी-कभी दूसरे प्रकार के दंड भी देते थे। उनके सामने हिन्दुस्तानी जनता को जूते पहनकर जाना, छाता ओढ़ कर चलना आदि उनके लिए अनादर एवं अपमान माना जाता था। वे अपने सामने कुर्सी अथवा बेंच प बैठने की आज्ञा बहुत कम हिन्दुस्तानियों को देते थे।[3]

इन निलहे कोठीवाले साहबों की खेती करने की दो पद्धतियाँ थीं4 (प) जिराएन तथा (पप) असामीवार। जिराएन पद्धति से की जाने वाली खेती की व्यवस्था एवं देख रेख वे स्वयं अपने वेतनभोगी सेवकों के माध्यम से करते थे। खेतों में काम करने हेतु रैयत मजदूरों को बाध्य होना पड़ता था। अपनी इच्छा के विरूद्ध भी उन्हें नील के खेतों में जाकर काम करना पड़ता था, जिनके लिए पारिश्रमिक नाम मात्र का मिलता था। उससे वे भीतर-ही-भीतर सदा असंतुष्ट रहते थे। अपने असंतोष को प्रकट करने की क्षमता उनमें नहीं थी। असामीवार पद्धति में कोठी के मालिक असामियों से नील की खेती करवाते थे। तीन कठिया पद्धति के तहत असामियों को अपनी भूमि का सबसे उम्दा जमीन नील की खेती के लिए देना पड़ता था। इससे उनके अनाज की ऊपज स्वभाविक रूप से कम हो जाती थी और उन्हें भुखमरी एंव अभाव का सामना करना पड़ता था।

नील की खेती हेतु जमीन प्राप्त करने के लिए निलहों के द्वारा विभिन्न प्रकार के उपाय अपनाये जाते थे। कुल मिलाकर ये दो प्रकार के उपाय थे।5- (प) खुशकी तथा (पप) कुरता उली। खुशकी पद्धति के अनुसार नील के खेती करने के लिए कबुलियतें ऐसे आसामियों से की जाती थी जो कोठी के अधीन रैयत नहीं रहते थे। कुरता उली अत्यंत ही कष्टप्रद पद्धति थी। इसमें रैयतों को निलहे द्वारा कर्ज देकर उनकी आवास सहित सारी जमीन दीर्घकाल के लिए मकबूल करवा लेते थे। कभी-कभी उसकी अवधि इनती लम्बी होती थी कि मकबूल करने वाले के जीवनकाल में ऋण की चुकती करना और जमीन लौटाना असंभव हो जाता था। निलहे साहब मजदूरों को नाम-मात्र की मजूदरी भी नहीं देते थे। उन्हें पेट बाँधकर काम करना पड़ता था। वे अपने विरूद्ध हो रहे अत्याचार के खिलाफ न्यायलय भी नहीं जा सकते थे, क्योंकि दंड विभाग के अधिकारी आमतौर पर अंग्रेज ही होते थे। उनका वरदहस्त निलहे अंग्रेजों पर ही होता था जिससे उनकी रक्षा होती थी और वे निर्भीक होकर रैयतों का शोषण करते थे।

लगभग सौ वर्षो से इस क्षेत्र मे अंग्रेज लोग नील की खेती किया करते थे। उन्होंने चम्पारण जिले में नील बनाने के अनेक कारखानों भी खोल रखे थे तथा अनेक गाँवों की मालगुजारी वसूल करने का ठेका भी इन्हीं लोगों के पास था। सरकार द्वारा इन नीलहों ने तीनकठिया कानून भी पास करवा लिया था। इस प्रकार यहाँ के गांवों पर निलहों ने पूरी तरह कब्जा जमा लिया था।6 डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी आत्मकथा में लिखा है- 'किसी भी रैयत की हिम्मत नहीं पड़ती थी कि वह नील बोने से इन्कार करे। अगर कोई हिम्मत करता तो उसपर हजार तरह के जुल्म करके उसे मजबूर कर दिया जाता था। घर और खेत लूट लिए जाते, खेत मवेशियों से चरवा दिए जाते, जुर्माना वसूल किया जाता और पीटा भी जाता था। इस डर के मारे प्रायः सभी रैयत तीन कठिया मानकर बीघा पीछे तनी कट्ठा नील बो दिया करते। उनके खेतों में जो सबसे बेहतर होते, नीलवर उन्हीं को चुनकर नील बोने के लिए कहते। नील बोने का काम काश्तकारों को सब कामों से पहले पूरा करना पड़ता था। इसके लिए वे रैयत को कुछ बीघा पीछे दिया करते थे, जो कभी खर्च के लिए पूरा नहीं होता था। गवर्नमेंट के अफसर इन गोरों की मदद करते। अगर कोई अफसर हिम्मत करके इंसाफ करना चाहता तो नीलवरों का असर ऊपर के अफसरों तक इतना ज्यादा था कि उस मातहत अफसर पर आफत आ जाती। जो अफसर सच्चे होते, नीलवरों के जुल्म और तीनकठिया के खिलाफ रिपोर्ट भेजा करते, पर इससे कुछ होता-जाता नहीं था। कभी-कभी रैयत बलवा कर देते या आपस में मिलकर कुछ दूसरे प्रकार का तहलका मचा देते। नतीजा यह होता था कि गाँव के गाँव लूट लिए जाते। पुलिस और कचहरी के अमलों के मदद से बेचारी रैयत हर तरह से मजबूर कर लिए जाते थे।''[7]

दूसरी ओर सरकार पर दबाव डालकर निलहों ने ऐसे कानून पास करा लिए थे जिनके अनुसार जमींदार रैयत को मनचाही फसल बोने के लिए मजबूर कर सकता था और यदि रैयत इससे छुटकारा पाना चाहता, तो उस पर मनमाना लगान बढ़ा दिया जाता। इसके अलावा बेतिया राज को इंगलैण्ड से कर्ज दिलाकर नीलवरों ने राज के बहुत से गाँवों पर मुकरी हक अर्थात् स्थायी अधिकार का पट्टा हासिल कर लिया था, जिसके अनुसार वे राज्य को एक निश्चित मालगुजारी देते थे और इसके बदले में उन गाँवों से मनमाना धन कमा सकते थे।[8]

इसी बीच जर्मनी में कृत्रिम रंग का आविष्कार हुआ जो नील से सस्ता पड़ता था। इसका परिणाम यह हुआ कि नील का महत्व घट गया और अब नील बोने से कोई फायदा नहीं होने लगा। निलहों ने इस घाटे की पूर्ति के लिए उस धारा का आश्रम लिया जिसके अनुसार किसानों को नील की खेती से मुक्त कर उनके लगान की वृद्धि की जा सकती थी। किसान इस छूट के लिए तैयार नहीं थे, क्योंकि वे समझते थे कि निलहे स्वार्थवश उनको नील बोने से मुक्त कर रहे हैं। परंतु निलहों ने जबर्दस्ती और मार-पीट के द्वारा इजाफे का पट्टा तामील करवाया। जहाँ केवल ठेकेदारी का हक पहुँचता था, वहाँ किसानों से नगद वसूल किए गए। उनसे हैण्डनोट लिखवा लिए गए। इस प्रकार निलहों ने करीब 20-25 लाख रूपए किसानों से वसूल किए।[9] चम्पारण के जिन हिस्सें में नील की खेती नहीं होती थी, वहाँ किसानों पर गैरकानूनी ढंग

www.ignited.in

से लगान बढ़ाया जाता था या उससे नगद रूपए वसूल किए जाते थे। सरकारी अफसर भी जनता के शोषण में नीलवरों का पूरा सहयोग करते थे।

नीलवरों का अत्याचार चरम सीमा पर था। प्रत्येक नीलवर पर्व-त्यौहार के समय, कार खरीदने के समय, बंगले को मरम्मत कराते समय तथा अपनी भैंस या घोड़ों के बूढ़े हो जाने पर प्रत्येक रैयत से एक रूपया वसूल करता था। अगर कोई रैयत अपने पिता के मृत्यु के बाद जमीन का मालिक बनता, तो निलहे उससे भी पाँच रूपए वसूल करते थे। निलहों के इन अत्याचारों से तंग आकर कितनी ही बार किसानों ने बगावत भी की, परंतु इन बगावतों को बड़ी ही निर्दयातपूर्वक दबा दिया जाता था। सबसे पहले 1857 में किसनों ने निलहों के विरूद्ध विद्रोह किया था। फिर 1907-08 ई. में निलहों के अत्याचारों के खिलाफ किसानों ने एक गुप्त संगठन कायम किया। अत्याचार इतना अधिक था कि 1908 में बलवा तक हो गया। चम्पारण जिले में सरकार ने आतंक का राज्य कायम कर दिया। करीब 350 व्यक्तियों को जेल में डाला गया।[10] सरकार द्वारा तहकीकात करने के लिए डब्ल्यू.आर. गुले की अध्यक्षता में एक कमिटी भी नियुक्त की गयी। कमिटी को जाँच-पड़ताल करने में 5 वर्ष लग गए। फिर भी रिपोर्ट नहीं प्रकाशित की गयी, क्योंकि रिपोर्ट में निलहों के अत्याचारों, मनमाना एवं गैरकानूनी ढंग से किए जाने वाले करतूतों का साफ उल्लेख किया गया था।[11]

'बिहारी' के सम्पादक महेश्वर प्रसाद ने भी सरकार का ध्यान इस ओर दिलाना चाहा। उन्होंने 'बिहार में प्लान्टर्स और रैयत' शीर्षक से पाँच-छह किश्तों में एक लेख प्रकाशित किया। लेकिन बिहार के राज्यपाल इससे नाराज हो गए और महेश्वर प्रसाद को सेवामुक्त कर दिया गया। कलकत्ता के 'अमृत बाजार पत्रिका', 'भारतमित्र' तथा 'हितवात्ता;, कानपुर के 'प्रताप', इलाहाबाद के 'अभ्युदय' तथा नागपुर के 'हिंद केसरी' भी समय-समय पर इस विषय लेख छापते रहते थे। इसी बीच 'प्रताप' में एक सूचना छपी, जिसमें बिहार के लोगों से अपील की गयी थी कि जिन लोगों के पास चम्पारण से संबंधित सामग्री हो, वे भेज दें जिससे तोताराम द्वारा लिखी गयी ''फोजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष'' की तरह ही चम्पारण में निलहे गोरों के अत्याचार पर एक पुस्तक लिखी जा सके।[12] प्रताप ने बिहार सरकार के इस कार्य को अत्यंत अनुचित बताते हुए लिखा- ''चम्पारण के विषय में प्रताप में जो कुछ समय-समय पर छपता रहा है, उससे बिहार की जनता की आँखें खुली हैं और बिहार सरकार का आसन भी कुछ डिगा है। चम्पारण की अन्याय की गूंज बिहार की कौंसिल तक पहुँच गयी है, परंतु सरकार बन्दोबस्त के नाम पर लोगों को संतोष देकर चुप्पी साधे बैठी है। उसके इस ढंग से पीडित लोग चक्कर में हैं। उनकी समझ में नहीं आता कि उनकी सरकार कब और क्या करना चाहती है?..... इस घटना से हम देखते हैं कि सरकार एक ऐसी आवाज को धर कर दबा डालना चाहती है जो उसकी प्रजा के लाखों कण्ठ से निकल रहीं है।[13]

उल्लेखनीय है कि समय-समय पर बिहार प्रान्तीय सम्मेलन में भी निलहों के अत्याचारों की जाँच की मांग की जाती रही थी। ब्रजकिशोर प्रसाद ने बिहार प्रान्तीय सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए यह मांग की थी कि चम्पारण के अत्याचारों की जाँच के लिए एक समिति बने, जिसमें सरकारी तथा गैर-सरकारी, दोनों तरह के सदस्य हों।[14] इसके बाद छपरा में 3 अप्रैल, 1915 को बिहार प्रान्तीय सम्मेलन के सातवें अधिवेशन के अध्यक्ष नंदकिशोर लाल ने भी इस मांग को दुहाराया [15] किन्तु परिणाम कुछ भी नहीं निकला।

1916 में अखिल भारतीय कांग्रेस की वार्षिक अधिवेशन लखनऊ में हुआ। बिहार से काफी संख्या में प्रतिनिधि पहुँचे थे। चम्पारण के एक किसान-राजकुमार शुक्ल, जो निलहे अत्याचारों से स्वयं पीड़ित थे, वे वहाँ पहुँचे थे। राजकुमार शुक्ल ने इस संबंध में गाँधी जी से मिलने को सोचा, क्योंकि इस समय तक गाँधी जी अपने दक्षिण अफ्रीका के कार्यो से काफी प्रसिद्ध हो चुके थे। अतः राजकुमार शुक्ल गाँधी जी से मिले और चम्पारण के अत्याचारों का पूरा विवरण उन्हें सुनाया। गाँधी जी को उनकी बातों पर विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि गाँधी जी की धारणा थी कि इस तरह के अत्याचार अंग्रेजी राज्य में संभव नहीं है।[16] गाँधी जी को विश्वास दिलाने के लिए राजकुमार शुक्ल ने ब्रजकिशोर प्रसाद को उनसे मिलाया, परंतु वे उस समय गाँधी जी को प्रभावित करने में असफल रहे। इस विषय में एक प्रस्ताव पेश करने के लिए गाँधी जी को कहा गया परंतु गाँधी जी ने इससे इनकार कर दिया। गाँधी जी ने ब्रजकिशोर प्रसाद से कहा कि चम्पारण की जनता पर हो रहे अत्याचारों को बिना अपनी आँखों से देखे वे इस विषय पर अपना विचार व्यक्त नहीं कर सकते।[17] लखनऊ कांग्रेस में ही ब्रजकिशोर प्रसाद द्वारा एक प्रस्ताव पेश किया गया, जिसमें यह मांग की गयी कि भारत में भूमि-संबंधी कठिनाइयों तथा भारतीय और निलहों के बीच बिगड़े संबंधों की जाँच और सुधार संबंधी सुझाव देने के लिए एक समिति बने, जिसमें सरकारी और गैर-सरकारी दोनों तरह के सदस्य हों।[18] यह प्रस्ताव सर्वसममति से पारित हुआ।

राजकुमार शुक्ल गाँधी जी का पीछा नहीं छोड़ रहे थे और वे गाँधी जी से बराबर निवेदन कर रहे थे कि चम्पारण दौरा के लिए तिथि की घोषणा करें। स्वयं गाँधी जी ने उल्लेख किया कि- ''लखनऊ से मैं कानपुर गया था। वहाँ भी राजकुमार

शुक्ल हाजिर हो गये। यहाँ से चम्पारण बहुत नजदीक है। "एक दिन दे दीजिए'। 'मैंने कहा- अभी मुझे जाने दे, पर मैं चम्पारण आने का वचन देता हूँ।' यह कहकर मैं ज्यादा बंध गया। मैं आश्रम गया तो राजकुमार शुक्ल वहाँ भी मेरे पीछे ही लगे रहे। 'अब तो दिन मुर्कर कीजिए।' मैंने कहा, फलाँ तारीख को मुझे कलकत्ते जाना है, वहाँ आइये और मुझे ले जाइए।[19]

कलकत्ता में गाँधी जी की ठहरने की योजना भूपेन्द्रनाथ बसु के घर में रखी गयी थी। राजकुमार शुक्ल यहाँ भी गाँधी जी के पहुँचने के पूर्व ही आ पहुँचे। 19 अप्रैल, 1917 को गाँधी जी राजकुमार शुक्ल गाँधी जी को राजेन्द्र प्रसाद के घर ले गये। राजेन्द्र प्रसाद उस समय पुरी गये हुए थे। तत्पश्चात् मौलाना मजहरूल हक को अपने आने की खबर गाँधी जी ने दी। मजहरूल हक से गाँधी जी का पूर्व परिचय था और वे गाँधी जी से पहले भी आग्रह कर चुके कि कभी वे पटना आएँ, उनका आतिथ्य स्वीकार करें। खबर मिलते ही मजहरूल हक आकर गाँधी जी को अपने घर ले गये। संध्या समय में गाँधी जी मुजफ्फरपुर रवाना हुए। गाँधी जी के आने की खबर आचार्य जी.बी. कृपालानी को भेज दी गयी थी, जो उस समय मुजफ्फरपुर में ही रहते थे। स्टेशन पर बहुत से छात्रों के साथ आचार्य कृपालानी गाँधी जी के स्वागत के लिए उपस्थित थे। मुजफ्फरपुर में गाँधी जी का भव्य स्वागत हुआ। उनकी आरती उतारी गयी और विद्यार्थी श्यमानन्द सहाय, जो उस समय जी.बी.बी. कॉलेज के छात्र थे, की बग्घी मंे बैठकर गाँधी जी को आचार्य कृपलानी के आवास पर ले गए।[20]

गाँधी जी के आने की सूचना पाते ही दूसरे दिन मुजफ्फरपुर के कुछ नामी-गिरामी वकील यथा-रामनवी प्रसाद, बिन्देश्वरी प्रसाद शर्मा, रामदयालु सिंह आदि गाँधी जी के पास पहुँचे और चम्पारण के रैयतों की दुःखभरी कहानी सुनायी। उनलोगों ने यह भी कहा कि आचार्य कृपलानी के यहाँ रहकर जाँच का काम ठीक ढंग से नहीं हो सकता। इसलिए वे उनलोगों के सहयोगी गया बाबू के यहाँ चले गए। उन्होंने गांधी जी से कहा कि वे भी सरकार से भयभीत हैं, परंतु फिर भी अपनी शक्ति एवं सामथ्र्य के अनुसार चम्पारण की जाँच में सहयोग दंगे।[21] दरभंगा से ब्रजकिशोर प्रसाद तथा पुरी से राजेन्द्र प्रसाद को भी तार देकर बुला लिया गया। उनलोगों ने गाँधी जी को इस कार्य के लिए पूरी तरह से सहयोग देने का आश्वासन दिया।

मोतिहारी जाने से पहले गाँधी जी ने नीलवर संघ के मंत्री जे.एच. विल्सन और तिरहुत मण्डल के आयुक्त एल.एफ. ओपर्ड से मुलाकता की। उन दोनों ने गाँधी जी के काम में कोई दिलचस्पी नहीं ली और उनसे अविलम्ब तिरहुत छोड़ देने को कहा। नीलवरों के सचिव ने गाँधी जी से साफ-साफ कहा कि वे एक बाहरी आदमी हैं और उन्हें नीलवरों और रैयतों के बीच पड़ने का कोई अधिकार नहीं है। हाँ, अगर वे ज्ञापन देना चाहें, तो इसे लिखित रूप में वे दे सकते हैं। गाँधी जी ने विनम्रतापूर्वक कहा कि अपने आप को बाहरी व्यक्ति नहीं समझते और रैयत जाँच कराना चाहती है, उसे ऐसा करने का पूरा अधिकार है।[22]

इन सभी घटनाओं से गाँधी जी का विश्वास जम गया कि चम्पारण में किसानों की हालत, जैसा वे सुन रहे थे, उससे भी बदतर है। उन्होंने अविलम्ब मोतिहारी जाने का निर्णय कर लिया। इससे पूर्व उन्होंने मुजफ्फरपुर के पास ही किसी गाँव को देखने की इच्छा व्यक्त की, जिससे कि वे कठिनाइयों से स्वयं पूरी तरह अवगत हो सकें। गाँधी जी के इच्छानुसार उन्हें एक मुसहर के घर में ले जाया गया। वे लोग गाँधी जी और उनके सहयोगियों को अनायास देखकर डर गए। पर जब उन्हें यह बताया गया कि वे और कोई नहीं, केवल एक महात्मा हैं, तब उनकी जान में जान आयी और वे बिना किसी हिचकिचाहट के गाँधी जी के सवालों के जवाब देने लगे। उनकी दशा को देखकर गाँधी जी के मन में आया कि स्त्रियों की दशा में सुधार किए बिना वास्तविक स्वराज्य नहीं आ सकता।

15 अप्रैल को गाँधी जी ने रामनवमी प्रसाद तथा धरणीधर प्रसाद के साथ मोतिहारी के लिए प्रस्थान किया। उन लोगों के ठहरने का प्रबंध गोरख प्रसाद वकील के घर में हुआ। वहाँ पहुँचे पर गांधी जी को मालूम हुआ कि जराउल पट्टी नाम गाँव के एक धनी किसान को गाँव के लोगों ने निलहे साहब के कहने पर लूट लिया है। गाँधी जी ने दूसरे दिन उस गाँव में जाने का निश्चय किया। निश्चित समय पर गाँधी जी रामनवमी प्रसाद तथा धरणीधर के साथ पैदल ही चल पड़े, क्योंकि निलहों के भय से गाँधी जी के लिए अपनी सवारी देना किसी ने स्वीकार नहीं किया। परंतु नगर के बाहर एक हाथी उनलोगों की प्रतीक्षा में खड़ा था। जिसका प्रबंध उसी गाँव के लोगों ने किया था। मोतिहारी से छह मील की दूरी पर स्थित चन्द्रहिया गाँव में पहुँचकर वे लोग वहाँ के लोगों से बातचीत कर ही रहे थे कि सादे लिबास मंे एक दारोगा सायकिल पर आया और बोला कि जिलाधीश गाँधी जी से मिलना चाहते हैं। गाँधी जी उस दारोगा के साथ बैलगाड़ी में सवार होकर नगर के लिए प्रस्थान कर गए तथा रामनवी प्रसाद को उस गाँव में जाकर जाँच का काम पूरा करने का आदेश दिया। परंतु जब रामनवमी प्रसाद आदि उस गाँव में पहुँचे तो वहाँ दूसरा दारोगा उनलोगों की प्रतीक्षा में बैठा था। उसने उनलोगों को तुंरत वह स्थान छोड़ देने की सलाह दी। अतः वे लोग शीघ्रता से जाँच का काम पूरा कर मोतिहारी लौट आए।[23]

www.ignited.in

इधर जब गाँधी जी ने आधी दूरी तय कर ली तब पुलिस का एक उपाधीक्षक उनसे मिला, जो उनके लिए धारा 144 की नोटिस लिए हुए था। उस नोटिस में जिलाधीश ने गाँधी जी को आदेश दिया था कि वे अविलम्ब मोतिहारी छोड़कर चले जायें। परंतु गाँधी जी उस आदेश का उल्लंघन कर परिणाम भुगतने को तैयार हो गए। उन्होंने मदन मोहन मालवीय, एच.एस. पोलक, राजेन्द्र प्रसाद तथा सी.एफ. एण्ड्रूज को तार भेजा तथा ब्रजकिशोर प्रसाद को आवश्यक आदेश लिखा। उन्होंने अपनी गिरफ्तारी के बाद के कार्यक्रम को भी तैयार किया, जिसकी एक-एक प्रति रामनवमी प्रसाद तथा धरणीधर प्रसाद को दे दी गयी।[24]

17 अप्रैल को गाँधी जी को सूचना मिली, जिसके अनुसार उन्हें स्थानीय अनुमण्डलाधिकारी के यहाँ तीसरे दिन आज्ञा-उल्लंघन के मुकदमें के सिलसिले में उपस्थित होना था। जिस दिन गाँधी जी पर मुकदमा चला, वे रामनवमी प्रसाद और धरणीधर प्रसाद के साथ अदालत गए। रास्ते में रामनवमी प्रसाद तथा धरणीधर प्रसाद ने उन्हें बताया कि उनके साथ वे लोग भी मौका आने पर जेल जाने को तैयार हैं।[25] इनलोगों की कर्मठता का आभास मिलते ही गाँधी जी संतुष्ट हो गए। अदालत रैयतों से खचाखच भरी थी।

अदालत में गाँधी जी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और अपने कार्य को न्यायोचित साबित करने की कोशिश की। अपने बयान में गाँधी जी ने कहा कि वे कानून की मर्यादा की रक्षा करना नहीं चाहते, बल्कि वैसा करने का कारण उनकी अन्तरात्मा की आवाज थी। बयान जारी रखते हुए गाँधी जी ने कहा- मैं मानवीय तथा राष्ट्रीय सेवा की भावना से प्रेरित होकर आया हूँ। मुझे आमंत्रित किया गया था कि मैं यहाँ आऊँ और रैयतों की सहायता करूँ, क्योंकि निलहे उनके साथ उचित व्यवहार नहीं करते। परंतु बिना समस्या का अध्ययन किए मैं उनकी कोई सहायता नही कर सकता। इसलिए मैं इन समस्याओं का अध्ययन करने आया हूँ, जिसमें यथासंभव प्रशासन और निलवारों का सहयोग भी अपेक्षित है। मैं ऐसा विश्वास नहीं करता कि मेरे यहाँ आने से किसी तरह की अशांति उत्पन्न होगी। मैं प्रशासन की कठिनाइयों को भी समझता हूँ। एक कानून की मर्यादा की रक्षा करने वाले नागरिक की तरह मेरा यह फर्ज होता है कि मैं धारा 144 के आदेश का पालन करूँ, परंतु वैसा मैं अपनी कत्तव्य भावना को चोट पहुँचाये बिना नहीं कर सकता।[26] महात्मा गाँधी के बयान से अनुण्डलाधिकारी तथा सरकारी वकील दोनों घबड़ा गए। उन्होंने इस संबंध में जिलाधीश से आदेश लिया। जिलाधीश ने गाँधी जी को अपना काम एक दिन तक स्थगित रखने की सलाह दी, जिससे वे सरकार से इस विषय में समुचित परामर्श कर सकें।

इसके बाद पटना से मजहरूल हक, राजेन्द्र प्रसाद, ब्रजकिशोर प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह, शंभुशरण जी और पोलक जी मोतिहारी आए। उनलोगों ने गाँधी जी के जेल जाने के बाद के कार्यक्रम पर विचार-विमर्श किया। तय हुआ कि गाँधी जी के जेल जाने के बाद मजहरूल हक तथा ब्रजकिशोर प्रसाद आंदोलन का नेतृत्व करेंगे।[27] 21 अप्रैल को गाँधी जी को फिर कचहरी में हाजिर होना था, परंतु उसके पहले ही मजिस्ट्रेट ने संवाद भेजा कि उपराज्यपाल ने उनके खिलाफ मुकदमे को वापस ले लिया है। इसके अतिरिक्त जिलाधीष ने भी गाँधी जी को एक पत्र लिखा कि वे जाँच-पड़ताल में पूरी तरह से मदद करेंगे।[28] उसी दिन कृष्णदास सहाय तथा सच्चिदानन्द सिन्हा भी गाँधी जी से मिलने गए। हसन इमाम ने एक सहस्र रूपए भेजे। अंग्रेजी सरकार द्वारा मुकदमा उठा लेना केवल बिहार के लिए ही नहीं, वरन् दूरे देश के लिए सविनय अवज्ञा आंदोलन का पहला सबब था। पूरे देश में इसकी चर्चा हुई और अखबारों ने गाँधी जी के कार्यो एवं कार्यक्रमों का खूब प्रचार-प्रसार किया। उनके इन कार्यो से गाँधी जी की तस्वीर राष्ट्रीय स्तर पर लोगों के सामने उभर कर आयी और गाँधी जी लोगों में काफी लोकप्रिय होने लगे।

वस्तुतः गाँधी जी अपने सहयोगियों के दिल से अंग्रेजों का भय निकाल देना चाहते थे और वे बहुत हद तक इसमें सफल भी हुए। गाँधी जी के मुकदमे का फैसला होने के पूर्व दीनबन्धु एण्ड्रूज भी मोतिहारी आये। चूँकि एण्ड्रूज अंग्रेज थे, इसलिए राजेन्द्र प्रसाद और उनके साथी चाहते थे कि वे कुछ दिन और ठहर जायें। परंतु गाँधी जी ने अपने सहयोगियों से कहा- "आप लोग जितना जोर डाल रहे हैं कि एण्ड्रूज को रहना चाहिए, उतना ही मेरा दृढ़ निश्चय होता जा रहा है कि उन्हें नहीं रहना चाहिए। आपलोगों के दिल में गवर्नमेंट और अंग्रेज नीलवरों का डर है। आप समझते हैं कि एक अंग्रेज रहेगा तो आपको सहारा होगा। आप इसी कारण एण्ड्रूज को रोकना चाहते हैं। मैं चाहता हूँ कि यह डर आपके दिल से निकल जाये और यह घाव भी निकल जाये कि अंग्रेज में और आप में कोई फर्क है। आपको अपने ऊपर भरोसा करना चाहिए और दूसरे दिन एण्ड्रूज चले गए।[29]

पूरे तिरहुत मंडल के रैयत गाँधी जी को अपन सबसे बड़ा मददगार समझते हुए हजारों की संख्या में उनके पास आने लगे, जिनके लिए गाँधी जी सबसे बड़े अधिकारी थे, जिनके पास जिलाधिकारी तथा मजिस्ट्रेट के समान ही बयान दिया जाता था। करीब 25 हजार लोगों के बयान लिए गए। कुछ दिनों के बाद बेतिया और मोतिहारी दोनों जगहों पर बयान लिया जाने लगा। इस काम में सहयोग करने वालों में ब्रजकिशोर प्रसाद, राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपालानी,

शिवनन्दन राय तथा गोरख प्रसाद के जिम्मे मोतिहारी के मुख्यालय का कार्यभार था। पीर मुहम्मद तथा राजकुमार शुक्ल भी तथ्य का संकलन करते थे।[30] अनुग्रह नारायण सिंह ने अपने वर्णन में लिखा है- "जैसे-जैसे हम लोगों का बयान लिखने का काम आगे बढ़ता जा रहा था, वैसे-वैसे कोठीवालों के बीच घबराहट बढ़ती जा रही थी। अखराबों में लेख निकल रहे थे। दोनों पक्षों के सवाल-जवाब, टीका-टिप्पणी छपती थी, महात्मा गाँधी बीच-बीच में कलेक्टर और सुपरिन्टेडेन्ट से मिल लिया करते थे और बयान की सारी बातें सुना दिया करते थे। कोठीवालों का कहना था कि महात्मा गाँधी व्यक्तिगत रूप से बहुत ही अच्छे आदमी हैं और इनको चम्पारण में रहने दिया जाय तो कोई हर्ज नहीं हो सकता है। पर उनके साथी जो एक दूसरे जिले के हैं, खासकर वकालत पेशा करने वाले हैं, निहायत धूर्त हैं। गाँधी जी के साथ ऐसे लोग यहाँ रहकर अपनी वकालत चलाने के लिए लोगों को झूठ-मूठ उभार रहे हैं। महात्मा गाँधी उनलोगों को हटा दें तो सब काम शांति से चलता रहे। बापू ने कहा कि उनके किसी साथी के विरूद्ध मुनासिब शिकायत सबूत के साथ कही जाय तो उसको वह अपनी जमात से अलग कर देने को तैयार हैं। पर जब तक ऐसी बात नहीं कही जाती, वे किसी को हटाने के लिए तैयार नहीं। परंतु ऐसा कुछ करने को कोठीवाले तैयार नहीं थे।

गाँधी जी ने चारों ओर गाँवों को घूम-घूमकर देखा। लोगों के आंगन तक में नील बोया हुआ था। जब वे सिंहा छपरा नामक गाँव मंे गये तो एक विधवा स्त्री अपने चार छोटे-छोटे बच्चों को लेकर उपस्थित हुई। बच्चों की अवस्था दस वर्ष से तीन वर्ष तक की थी। गाँधी जी को रो-धोकर उस महिला ने अपने सिर को दिखाते हुए कहा कि 'हुजूर! मेरे घर से खेत लगभग बीस बीघा दूर है। वहाँ तक ठेकेदार बाबू मेरा झोंटा खींचते हुए ले गए और मुझसे तथा मेरे दस वर्ष के लड़के से खेत का काम कराया। मेरा लड़का पढ़ता है। उसने आज तक खेत का काम नहीं किया था। गाँव के ग्वालों ने गाँधी जी से शिकायत की कि कोठीवाले उनसे दो आने सेर घी लेते हैं और दूध और दही का दाम तक नहीं मिलता।[31] इन घटनाओं से गाँधी जी काफी प्रभावित हुए। उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर सात हजार रैयतों के बयान लिए जिसके आधार पर एक छोटी सी प्रारंभिक रिपोर्ट तैयारकर बिहार सरकार के पास भेज दी गयी। इस घटना ने निलहे गोरों में खलबली मचा दी।[32]

निलहों ने गाँधी जी के सहकर्मियों को फँसाने का एक उपाय सोचा। धोकराहा नील कोठी के मैनेजर ने अपने घर का सामान निकालकर घर में आग लगवा दी। बड़े अधिकारियों के पास उसने गाँधी जी के सहयोगियों पर ही आग लगवाने का दोषारोपण किया। उसने यह भी लिखा कि इस प्रकार की घटनाओं से वे काफी भयभीत हो गए हैं। परंतु लोगों पर गाँधी जी का काफी विश्वास था और जिस व्यक्ति ने मैनेजर के कहने पर आग लगायी थी, उसने स्वयं लोगों को सारी कहानी सुना दी।[33] इसी क्रम में गाँधी जी को एक दिन बिहार सरकार का पत्र मिला जिसमें लिखा था- "आपकी जाँच काफी लम्बी हो रही है। न हो तो आप उसे बंद कर दें अथवा बिहार छोड़ दें।" जवाब में गाँधी जी ने लिखा कि उनकी जाँच का लम्बा या छोटा होना स्वभाविक है। परंतु जबतक इससे लोगों को राहत नहीं मिलेगी, तब तक बिहार छोड़कर जाने की उनकी कोई मंशा नहीं है। अब यह सरकार पर है कि जाँच-पड़ताल समाप्त कर रैयतों की समस्याओं का निदान करें।34 इसके कुछ दिनों के पश्चात् बिहार के राज्यपाल एडवर्ड अलबर्ट ने गाँधी जी को रांची बुलाया तथा एक जाँच समिति बनाने की इच्छा जाहिर की। उन्होंने गांधी जी से आग्रह किया कि वे इस समिति का एक सदस्य बनें। गाँधी जी ने इस शर्त पर सदस्यता स्वीकार की कि वे अपने सहकर्मियों से सलाह-मशविरा करने को स्वतंत्र होंगे, समिति के सदस्य होते हुए भी रैयतों की वाकलत करेंगे तथा जाँच असंतोषजनक होने पर रैयतों का पथ-प्रदर्शन करने का स्वतंत्र रहेंगे।[35]

जाँच समिति के अध्यक्ष मध्यप्रदेश के आयुक्त एफ.जी. स्लाई बने तथा और सदस्यों में बिहार और उड़ीसा के अधीक्षक और विधि परामर्शी एल.सी. अदानी, बिहार और उड़ीसा विधान परिषद के सदस्य राजा हरिहर प्रसाद, नारायण सिंह और डी.जे. रीड, वित्त विभाग के उपसचिव जी. रैना और मोहनदास करमचंद गाँधी थे। उपराज्यपाल एडवर्ड गेट ने बहुत प्रयास किया कि समिति का प्रतिवेदन सर्वसमस्त हो। उपराज्यपाल ने कहा कि जबतक सर्वसम्मत प्रतिवदेन नहीं होगा, तब तक कोई कार्यवाही करने में कठिनाई होगी। गाँधी जी तथा अन्य सदस्यों की भी यही इच्छा थी कि निर्णय सर्वसम्मत हो। अन्ततः 4 अक्टूबर 1947 को जाँच समिति ने सरकार को सर्वसम्मत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें सिफारिश की गयी कि बढ़ी हुई लगान का एक-चैथाई हिस्सा छोड़ दिया जाय तथा बाकी तीन-चैथाई ज्यों का त्यों बना रहे। नगद वसूल किए गए रूपयों में से 25 प्रतिशत वापस कर लिया जाये तथा शेष रूपया रैयत छोड़ दें तथा तीनकठिया या पाँचकठिया प्रथा उठा दी जाय।[36]

सरकार ने समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया। एक कानून बनाकर तीनकठिया प्रथा का अंत कर दिया तथा सभी रैयतों का लगान भी घटा दिया गया। चम्पारण आंदोलन के संबंध में यह कहा जा सकता है कि इसका जो नतीजा निकला

www.ignited.in

वह रैयतों की मांग से बहुत कम थी। इसका एक अत्यंत सकारात्मक परिणाम यह निकला कि रैयतों में एक नयी जागृति आयी तथा जुल्म के खिलाफ लड़ने की हिम्मत आयी। राष्ट्रीय आंदोलन पर इसका प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़, जिसे हम असहयोग आंदोलन व आने वाले अन्य राष्ट्रीय-स्थानीय आंदोलनों में देख सकते हैं।

इसप्रकार हम देख सकते है कि गाँधी जी की चंपारण यात्रा ऐतिहासिक सिद्ध हुई, जो आगे चलकर स्वतंत्रता संग्राम के मार्ग में मील का पत्थर साबित हुआ। गाँधी जी ने, नीली आग में जलते चम्पारण के रैयतों को अंग्रेजी जुल्मों से मुक्ति दिलायी। चूँकि रैयत अब जोर-जुल्म बर्दाषत नहीं कर सकती और बिना जोर-जुल्म के मुनाफा नहीं हो सकता। अतः तीन-चार वर्षों के अंदर ही निलहे अंग्रेज अपनी जमीन और कोठी बेचकर स्वदेश चले गये।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद; सत्याग्रह इन चम्पारण, द्वितीय संस्करण, 1949, पृ.सं. 10
2. चक्रपाणि हिमांशु; बिहार में राष्ट्रीय आन्दोलन की विभिन्न प्रवृत्तियाँ, प्रकाशक-विक्रमशिला शोध संस्थान, भागलपुर, 2009, पृ.सं.-160
3. डॉ. डी.एन.सिंह; मिथिला में स्वातं□य आन्दोलन का उद्भव एवं विकास, पृ.सं.-74
4. पूर्वोक्त, पृ.सं.-75
5. डॉ. एन.एम.पी. श्रीवास्तव; बिहार में राष्ट्रीयता का विकास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना, 1988, पृ.सं.-46
6. राजेन्द्र प्रसाद; आत्मकथा, पृ.सं.-90
7. डॉ. एन.एम.पी. श्रीवास्तव; पूर्वोल्लिखित, पृ.सं.-50
8. के.के.दत्त; बिहार में स्वातंय आन्दोलन का इतिहास, भाग-1, पटना, पृ.सं.-183
9. सर्चलाईट; 2 अक्टूबर, 1916
10. प्रताप; 6 अप्रैल, 1916
11. प्रताप; 17 जनवरी, 1916
12. के.के.दत्त; बिहार में स्वतं□य आंदोलन का इतिहास, भाग-1, पृ.सं. 189
13. प्रताप; 6 अप्रैल, 1916
14. राजेन्द्र प्रसाद; सत्याग्रह इन चम्पारण, 1928, पृ.सं.-102-104
15. पूर्वोक्त, पृ.सं.-104-105
16. अनुग्रह नारायण सिंह; मेरे संस्मरण, पटना, 1961, पृ.सं.-8
17. एम.के. गाँधी; दि स्टोरी ऑफ़ माई एक्सपेरिमेंट विद टुथ, अहमदाबाद, 1929, पृ.सं.-356-357
18. रिपोर्ट ऑन दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, लखनऊ, 26-30 दिसम्बर, 1916, पृ.सं.-68-69
19. एम.के. गाँधी; पूर्वउद्दत, (हिन्दी अनुवाद) पृ.सं.-352
20. पूर्वोक्त; पृ.सं.-362-364
21. पूर्वोक्त; पृ.सं.-369-370
22. रामनवमी प्रसाद; महात्मा गाँधी के साथ चम्पारण में, बिहार समाचार, 15 अगसत, 1972, पृ.सं.-10
23. पूर्वोक्त, पृ.सं.-10-11
24. पूर्वोक्त, पृ.सं.-12
25. एम.के. गाँधी; पूर्वउद्दत, पृ.सं.-377-379
26. रामनवमी प्रसाद; पूर्वउद्दत, पृ.सं.-15
27. पूर्वोक्त, पृ.सं.-380
28. राजेन्द्र प्रसाद; आत्मकथा, पृ.सं.-96
29. डॉ. के. दत्त; पूर्वउदत, पृ.सं.-189
30. अनुग्रह नारायण सिंह; मेरे संस्मरण, पृ.सं.-15
31. प्रताप, 7 मई, 1917
32. प्रताप, 18 जून, 1917

33. एम.के. गाँधी; पूर्वउद्दत, पृ.सं.-403-404

34. पूर्वोक्त, पृ.सं.-405-406

35. पूर्वोक्त, पृ.सं.-404-405

36. के.के. दत्त; पूर्वउद्दत, पृ.सं.-195

Corresponding Author

Dr. Vardraj*

Department of History, TMB University, Bhagalpur